अकलंकदेव कृत न्यायविनिश्चय, सवृत्ति सिद्धिविनिश्चय एवं सविवृति प्रमाणसंग्रह के उद्धरणों का अध्ययन

कमलेश कुमार जैन

[भोगीलाल लहेरचंद इंस्टिट्यूट ऑफ इन्डालॉजी, दिल्ली में "**परम्परागत जैन साहित्य में प्राप्त उद्धरणों का अध्ययन**" विषयक एक बृहद् योजना पर कार्य चल रहा है। उक्त योजना के अनुसार, प्रारम्भिक प्रयास के रूप में "अकलंकदेव कृत **आप्तमीमांसाभाष्य** एवं **सविवृति लघीयस्त्रय** के उद्धरणों का अध्ययन" शीर्षक निबन्ध "जैन-विद्या-शोध-संस्थान" लखनऊ द्वारा "जैन विद्या के विविध आयाम" विषय पर आयोजित विद्वत् संगोष्ठी, १९९७ में प्रस्तुत किया गया था। बाद में उक्त लेख अहमदाबाद से प्रकाशित वार्षिक शोध पत्रिका "निर्ग्रन्थ" के द्वितीयांक में छपा है। यह निबन्ध उसी दिशा में अगली कड़ी है। इसमें अकलंकदेव कृत अन्य तीन ग्रन्थों (जिनकी अकलंककर्तृकता निर्विवाद सिद्ध हो चुकी है) के उद्धरणों का संक्षिप्त अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।-लेखक]

न्यायविनिश्चय -

न्यायविनिश्चय अकलंकदेव की एक दार्शनिक रचना है। धर्मकीर्तिकृत **प्रमाणविनिश्चय** ग्रन्थ प्रसिद्ध है। इसकी रचना गद्य-पद्यमय हुई है। अतएव अकलंक का **न्यायविनिश्चय** नाम धर्मकीर्ति के **प्रमाणविनिश्चय** नाम का अनुकरण हो सकता है। सिद्धसेन दिवाकर ने अपने न्यायावतार (जिसे अब अनेक विद्वान् सिद्धर्षिकृत रचना मानने लगे हैं) में प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द, इन तीन प्रमाणों का विवेचन किया है। बहुत संभव है कि अकलंक को **न्यायावतार** और **प्रमाणविनिश्चय**, ये दोनों ग्रन्थ इस नामकरण के लिए प्रेरक रहे हों।

वादिदेवसूरि के अनुसार, यदि धर्मकीर्ति का **न्यायविनिश्चय** नामक कोई स्वतंत्र ग्रन्थ रहा है[१], तो अकलंक द्वारा उसका भी अनुकरण किया गया होगा, ऐसा माना जा सकता है।

न्यायविनिश्चय का सर्वप्रथम प्रकाशन सिंघी जैन ग्रन्थमाला के ग्रन्थांक १२ के रूप में हुआ है। उसे **न्यायविनिश्चयविवरण** नामक टीका से संकलित / उद्धृत किया गया है। इसमें स्वयं अकलंकदेव कृत विवृति नहीं है। जबकि अकलंक के प्रायः अन्य सभी ग्रन्थों पर उनकी स्वोपज्ञ विवृति या वृत्ति प्राप्त होती है। **न्यायविनिश्चय** पर भी वृत्ति लिखी गयी थी, क्योंकि इसका एक अवतरण **सिद्धिविनिश्चय टीका** में **न्यायविनिश्चय** के नाम से उद्धृत मिलता है। यथा-[२]

"तदुक्तं **न्यायविनिश्चये**" "न चैतद् बहिरेव, किं तर्हि बहिर्बहिरिव प्रतिभासते। कुत एतत् ? भ्रान्तेः, तदन्यत्र समानम्" इति। दूसरा कारण, **न्यायविनिश्चयविवरणकार** का "वृत्तिमध्यवर्तित्वात्" आदि वाक्य भी है।

न्यायविनिश्चय की विवृति की चर्चा करते हुए पं. महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य, जो अकलंककृत ग्रन्थों के सम्पादक भी हैं, ने लिखा है[३] - "**लघीयस्त्रय** की तरह **न्यायविनिश्चय** पर भी स्वयं अकलंककृत विवृति अवश्य रही है। जैसा कि **न्यायविनिश्चय**विवरणकार के "वृत्तिमध्यवर्तित्वात्"[४] आदि वाक्यों से तथा **सिद्धिविनिश्चय** के नाम से उद्धृत "न चैतद् बहिरेव—"[५] आदि गद्यभाग से पता चलता है। **न्यायविनिश्चयविवरण** में "तथा च सूक्तं चूर्णौ देवस्य वचनम्" कहकर समारोपव्यवच्छेदात्—"श्लोक उद्धृत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिलता है । बहुत कुछ संभव है कि इसी विवृति रूप गद्यभाग का ही विवरणकार ने चूर्णि शब्द से उल्लेख किया हो । **न्यायविनिश्चयविवरणकार** वादिराज ने **न्यायविनिश्चय** के केवल पद्यभाग का व्याख्यान किया है।"[६]

अन्यत्र उन्होंने यह भी लिखा है-[७] "धर्मकीर्ति के **प्रमाणविनिश्चय** की तरह **न्यायविनिश्चय की** रचना भी गद्यपद्यमय रही है । इसके मूल श्लोकों की तथा उस पर के गद्य भाग की कोई हस्तलिखित प्रति कहीं भी उपलब्ध नहीं हुई । वादिराजसूरि ने इस पर एक **न्यायविनिश्चयविवरण टीका** बनाई है, परन्तु इसमें केवल श्लोकों का ही व्याख्यान किया गया है । अतः विवरण में से एक-एक शब्द छाँटकर श्लोकों का संकलन तो किया गया है, किन्तु गद्यभाग के संकलन का कोई साधन नहीं था, अतः वह नहीं किया जा सका। पर गद्य भाग था अवश्य" आदि ।

न्यायविनिश्चय की **स्वोपज्ञ विवृति** के अद्यावधि अनुपलब्ध होने पर भी मूल भाग में ऐसी अनेकानेक कारिकाएँ हैं, जिनके संगठन / निर्माण में पूर्ववर्ती आचार्यों के ग्रन्थों के वाक्यों या वाक्यांशों को बिना किसी उपक्रम या संकेत के सम्मिलित किया गया है । कारिका संख्या १/११० का प्रारम्भ गुणपर्यायवद् द्रव्यं-[८] से किया गया है । यह **तत्त्वार्थ सूत्र** ५/३७ का वचन है[९] ।

कारिका १/११४ का पूर्वार्ध "सदोत्पादव्यय-ध्रौव्ययुक्तं सदसतोऽगतेः"[१०] **तत्त्वार्थसूत्र** ५/३० का स्मरण कराता है । त॰ सू॰ का सूत्र इस प्रकार है[११]—"उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ।

कारिका २/१५४ पर जो कारिका प्राप्त होती है, वह इस प्रकार है[१२]-

अन्यथानुपपन्नत्वं यत्र तत्र त्रयेण किम् ।
नान्यथानुपपन्नत्वं यत्र तत्र त्रयेण किम् ॥

यह कारिका परम्परा से पात्रकेसरिस्वामी कृत **त्रिलक्षणकदर्शन** की मानी जाती है[१३] । इसका बिना उपक्रम के यहाँ ग्रहण किया गया है ।

कारिका २/२०९ में "असाधनाङ्गवचनमदोषोद्भावनं द्वयोः । न युक्तं निग्रहस्थानमर्थापरिसमाप्तितः[१४]। के द्वारा **वादन्याय** की कारिका "असाधनाङ्गवचन...नेष्यते[१५] ॥" की समालोचना की गई है ।

कारिका ३/२१[१६] पर समन्तभद्रस्वामी कृत **आप्तमीमांसा** की प्रसिद्ध कारिका[१७]-

सूक्ष्मान्तरितदूरार्थाः प्रत्यक्षाः कस्यचिद्यथा ।
अनुमेयत्वतोऽग्न्यादिरिति सर्वज्ञसंस्थितिः ॥

यथावत् ग्रहण की गयी है ।

इसी प्रकार और भी अनेक सूत्र, वाक्य, वाक्यांश या कारिकाएँ इसमें ग्रहण की गयी हैं । यहाँ पर कुछ का ही संकेत किया है ।

सवृत्ति सिद्धिविनिश्चय -

सवृत्ति सिद्धिविनिश्चय अकलंकदेव की विशुद्ध दार्शनिक / तार्किक रचना है । सिद्धिविनिश्चय मूल एवं उसकी **स्ववृत्ति** का उद्धार रविभद्रपादोपजीवी अनन्तवीर्यकृत **सिद्धिविनिश्चयटीका** की एकमात्र हस्तलिखित प्रति से किया गया है । इसमें १२ प्रस्ताव हैं, जिनमें प्रमाण, नय और निक्षेप का विवेचन किया गया है। जैसा कि पहले लिखा गया है कि अकलंकदेव कृत साहित्य में, विशेषकर उनके तार्किक ग्रन्थों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में बौद्ध साहित्य के ही अधिक उद्धरण / अवतरण मिलते हैं । उस पर भी अकलंकदेव ने धर्मकीर्ति को अधिक निशाना बनाया है, अतएव उन्होंने धर्मकीर्ति कृत ग्रन्थों की केवल मार्मिक आलोचना ही नहीं की है, किन्तु परपक्ष के खण्डन में उनका शाब्दिक और आर्थिक अनुसरण भी किया है ।

अकलंकदेव ने **सिद्धिविनिश्चय** की **स्वोपज्ञ वृत्ति** में लगभग बत्तीस उद्धरण दिये हैं । इनमें कोई छः उद्धरण दो बार प्रयुक्त हुए हैं, जिनमें आगे या पीछे उद्धरण सूचक कोई संकेत या उपक्रम नहीं है, अतः ये सभी वृत्ति के ही अंग प्रतीत होते हैं ।

सर्वप्रथम कारिका संख्या १/२० की वृत्ति में "यत्पुनरन्यत्" करके "आरामं तस्य पश्यन्ति न तं पश्यति कश्चन"[१८] वाक्य उद्धृत किया है । यह **बृहदारण्यकोपनिषद्**[१९] से ग्रहण किया गया है ।

कारिका संख्या १/२२ की वृत्ति में "यथा यथार्थाः चिन्त्यन्ते विशीर्यन्ते तथा तथा"[२०] वाक्य उद्धृत है। यह धर्मकीर्तिकृत **प्रमाणवार्तिक** की २/२०९ कारिका का उत्तरार्ध है । सम्पूर्ण कारिका इस प्रकार है-[२१]

"तदेतन्नूनमायातं यद्वदन्ति विपश्चितः ।
यथा यथार्थाश्चिन्त्यन्ते विशीर्यन्ते तथा तथा ॥"

कारिका १/२७ की वृत्ति में "मन्यते तथामनन्ति **तत्त्वार्थसूत्रकाराः**" करके "मतिः स्मृतिः संज्ञाचिन्ताऽऽभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम्"[२२] यह सूत्र उद्धृत किया है । यह सूत्र **तत्त्वार्थसूत्र** का ही है[२३] ।

कारिका २/८ की वृत्ति में "पश्यन्नयमसाधारणमेव पश्यति"[२४] वाक्य उद्धृत है । यही वाक्य कारिका २/१५ की वृत्ति के प्रारम्भ में "पश्यन्नयमसाधारणमेव पश्यति दर्शनात् इति"[२५] के रूप में आया है । यहाँ पर उद्धरण सूचक कोई शब्द नहीं है, इसलिए वृत्ति का अंग ही प्रतीत होता है । यह किसी बौद्धग्रन्थ का वचन है, इसका मूल निर्देशस्थल ज्ञात नहीं हो सका है ।

कारिका २/१२ की वृत्ति में, "यतोऽयं यथादर्शनमेव (मेवेयं) मानमेयफलस्थितिः क्रियते"[२६] इत्यादि वाक्य लिया गया है । और "तत्र" करके कारिका ७/११ की वृत्ति में "यथादर्शनमेवेयं मानमेयफलस्थितिः"[२७] रूप में एक वाक्य उद्धृत किया है । यह वाक्य या वाक्यांश **प्रमाणवार्तिक** की कारिका २/३५७ से लिया गया है, जिसमें कुछ पाठभेद मात्र है । मूल कारिका इस प्रकार पायी जाती है-[२८]

"यथानुदर्शनज्ञेयं मानमेयफलस्थितिः ।
क्रियतेऽविद्यमानापि ग्राह्यग्राहकसंविदाम् ॥

सिद्धिविनिश्चय में कारिका संख्या २/२५ का संगठन इस प्रकार किया गया है-[२९]

बुद्धिपूर्वां क्रियां दृष्ट्वा स्वदेहेऽन्यत्र तद्ग्रहात् ।
ज्ञायते बुद्धिरन्यत्र अभ्रान्तैः पुरुषैः क्वचित् ॥

स्वयं अकलंकदेव ने अपने एक अन्य ग्रन्थ **तत्त्वार्थवार्तिक** में "उक्तं" च" करके इसे निम्न रूप में[३०] -

बुद्धिपूर्वां क्रियां दृष्ट्वा स्वदेहेऽन्यत्र तद्ग्रहात् ।
मन्यते बुद्धिसद्भावः सा न येषु न तेषु धीः ॥

उद्धृत किया है । धर्मकीर्तिकृत **सन्तानान्तरसिद्धि** का पहला श्लोक भी इसी प्रकार का है ।[३१]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपर्युक्त दोनों प्रसंगों से स्पष्ट है कि **सिद्धिविनिश्चय** की कारिका २/२५ के उत्तरार्ध "ज्ञायते" इत्यादि की रचना स्वयं अकलंकदेव ने की है ।

कारिका संख्या ३/४ की वृत्ति "गो सदृशो गवय: इति वाक्यात्"[३२] के रूप में प्रारम्भ हुई है । इसके मूल स्रोत्र का अभी निश्चय नहीं हो सका ।

कारिका ३/८ की वृत्ति में "यत् सत् तत्सर्वं क्षणिकमेवेति"[३३] वाक्य उद्धृत है । यह **हेतुबिन्दु** एवं **वादन्याय** का वचन है[३४] ।

कारिका ३/१८ की वृत्ति में "यद् यद्भावं प्रति अन्यान्यपेक्षं तत्तद्भावनियतं यथा अन्त्या कारणसामग्री स्वकार्यजननं प्रति इति परस्य चोदितचोद्यमेतत्"[३५] के रूप में एक वाक्य उद्धृत किया गया है । यह **हेतुबिन्दु** का वाक्य है[३६] ।

कारिका ४/१४ की वृत्ति में "जलबुद्बुदवज्जीवा: मदशक्तिवद् विज्ञानमिति पर: अर्के कटुकिमानं दृष्ट्वा गुडे योजयति"[३७] करके एक वाक्य आया है । इनमें जलबुद्बुदवज्जीवा:" **न्यायकुमुदचन्द्र**[३८], पृ. ३४२ पर भी उद्धृत हुआ है । और "मदशक्तिवद् विज्ञानम्" यह वाक्य **न्यायकुमुदचन्द्र**[३९] पृ. ३४२ एवं ३४३ **ब्रह्मसूत्रशाङ्करभाष्य** ३/३/५३, **न्यायमंजरी** पृ. ४३७ एवं **न्यायविनिश्चयविवरण**, प्रथम भाग पृ. ९३ पर उद्धृत मिलता है । **प्रकरणपंजिका** पृ. १४६ पर "मदशक्तिवच्चैतन्यमिति" रूप से उद्धृत मिलता है[४०] ।

कारिका संख्या ४/२१ की वृत्ति में "यत:" करके "बुद्ध्यध्यवसितमर्थं पुरुषश्चेतयते"[४१] वाक्य आता है । यह सांख्यदर्शन के किसी ग्रंथ का कथन है । यह वाक्य **तत्त्वार्थश्लोकवार्तिक** पृ. ५०, **आप्तपरीक्षा** पृ. १६४, **प्रमेयकमलमार्तण्ड** पृ. १००, **न्यायकुमुदचन्द्र** पृ. १९०, **न्यायविनिश्चयविवरण**, भाग-एक, पृ. २३५ **स्याद्वाद रत्नाकर,** पृ. २३३ पर भी उद्धृत मिलता है[४२] ।

कारिका संख्या ५/३ की वृत्ति में "शक्तस्य सूचनं हेतुवचनं स्वयमशक्तमपि"[४३] वाक्य उद्धृत है । यह **प्रमाणवार्तिक** की कारिका ४/१७ का उत्तरार्ध है । सम्पूर्ण कारिका इस प्रकार पायी जाती है[४४] -

"साध्यभिधानात् पक्षोक्ति: पारम्पर्येण नाप्यलम् ।
शक्तस्यसूचकं हेतुवचोऽशक्तमपि स्वयम् ॥"

कारिका संख्या ५/३ की वृत्ति "शब्दा: कथं कस्यचित् साधनमिति ब्रुवन्"[४५] वाक्य से प्रारम्भ हुई है। यह वाक्य **प्रमाणविनिश्चय** से ग्रहण किया गया है, क्योंकि **सिद्धिविनिश्चय** के टीकाकार अनन्तवीर्य ने इस कथन को "तदुक्तं विनिश्चये" करके उद्धृत किया है । सम्पूर्ण कथन इस प्रकार है -

ते तर्हि क्वचित् किंचिद् उपनयतोऽपनयतो वा कथं कस्यचित् साधनम्[४६] ।"

कारिका संख्या ५/४ की वृत्ति "सर्व एवायमनुमानानुमेयव्यवहारो विकल्पारूढेन धर्मधर्मिन्यायेन न बहि: सदसत्त्वमपेक्षते इति चेत्"[४७] से प्रारम्भ हुई है । यह किसी बौद्ध दार्शनिक का कथन है । **प्रमाणवार्तिक** स्वोपज्ञ **स्ववृति** १/३ पर "तथा चानुमानानुमेयव्यवहारोऽयं सर्वो हि बुद्धिपरिकल्पतो बुद्ध्यारूढेन धर्मधर्मिभेदेनेति उक्तम्"[४८] रूप में यह कथन पाया जाता है । और **प्रमाणवार्तिक स्ववृति** की **टीका**[४९] में इसे आचार्य दिग्नाग का वचन कहा गया है । यथा - "आचार्यदिग्नागेनाप्येतदुक्तमित्याह-तथा चेत्यादि.." ।

कारिका संख्या ५/५ की वृत्ति में एक कारिका उद्धृत की गयी है[५०] -

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"**पक्षधर्मस्तदंशेन व्याप्तो हेतुस्त्रिधैव सः ।**
अविनाभावनियमात् हेत्वाभासास्ततोऽपरे ॥"

यह **हेतुबिन्दु** की प्रथम कारिका है[५१] । हेतुबिन्दु के इसी श्लोक १ को ही आधार बनाकर **सिद्धिविनिश्चय** की कारिका संख्या ६/२ का संगठन किया गया है । संगठित कारिका इस प्रकार है[५२] –

"**पक्षधर्मस्तदंशेन व्याप्तोऽप्येति हेतुताम् ।**
अन्यथानुपपन्नोऽयं न चेत्तर्केण लक्ष्यते ॥"

कारिका ५/८ की वृत्ति में ".....वादी निगृह्यते तत्त्वतः साधनाङ्गावचनात्, तथा प्रतिवाद्यपि भूतदोषमप्रकाशयन् । तत्त्वं प्रमाणतोऽप्रतिपादयतः असाधनांगवचनं भूतदोषं समुद्भावयति प्रतिवादीति...."[५३] इत्यादि कथन के द्वारा एवं अगली–

"**असाधनाङ्गवचन मद्दोषोद्भावनं द्वयोः ।**
निग्रहस्थानमिष्टं चेत् किं पुनः साध्यसाधनैः[५४] **॥**"

इस कारिका संख्या ५/१० के द्वारा **वादन्याय** की आद्य कारिका की समालोचना की गई है । **वादन्याय** की मूल कारिका इस प्रकार है[५५] –

"**असाधनांगवचनमदोषोद्भावनं द्वयोः ।**
निग्रहस्थानमन्यत्तु न युक्तमिति नेष्यते ॥"

कारिका संख्या ५/११ की वृत्ति में "तत्र सुभाषितम्" करके "विजिगीषुणोभयं कर्तव्यं स्वपक्षसाधनं च"[५६] यह वाक्य उद्धृत है । यह कथन किस शास्त्र का है, यह अभी ज्ञात नहीं हुआ है ।

सिद्धिविनिश्चय की कारिका संख्या ५/१५ का उत्तरार्ध इस प्रकार पाया जाता है[५७] — "अन्तर्व्याप्तावसिद्धायां बहिर्व्याप्तिरसाधनम् । यही कथन अकंलक के एक अन्य ग्रन्थ **प्रमाणसंग्रह** की कारिका ५ में, इस तरह मिलता है[५८] –

"**अन्तर्व्याप्तावसिद्धायां बहिरंगमनर्थकम् ।**"

न्यायावतार में उक्त कथन का अभिप्राय इस प्रकार व्यक्त किया गया है तथा उसे न्यायविदों का ज्ञान कहा गया है । मूल श्लोक इस प्रकार है[५९] –

"**अन्तर्व्याप्त्यैव साध्यस्य सिद्धौ बहिरुदाहृतिः ।**
व्यर्था स्यात्तदसद्भावेऽप्येवं न्यायविदो विदुः ॥"

कारिका संख्या ५/१५$\frac{१}{२}$ की वृत्ति में "दोषवत्त्वेऽपि यथा वाद्युक्तदोषोद्भावनायां प्रतिवादिनः सामर्थ्यान्निग्रहस्थानम्"[६०] यह वाक्य उद्धृत किया है और इस कथन को बालभाषित कहा गया है । यह उद्धरण किस ग्रन्थ का है, यह अभी पता नहीं चल सका है ।

कारिका संख्या ६/२ की वृत्ति में "निरूपचरित-स्व" करके "तदंशः तद्धर्मस्तदेकदेश इति"[६१] यह वाक्यांश उद्धृत है । यह **हेतुबिन्दु** का वचन है । **हेतुबिन्दु** में कारिका इस प्रकार आरम्भ होती है[६२] — "तदंशो हि तद्धर्म एव....।"

कारिका संख्या ६/२ की वृत्ति में "पक्षशब्देन समुदायवचनात्"[६३] यह वाक्य आया है । यह **हेतुबिन्दु**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के कथन का रूपान्तर है । मूल वाक्य इस प्रकार है[६४]-"पक्षो धर्मी अवयवे समुदायोपचारात्" ।

कारिका संख्या ६/२ की वृत्ति में "इति सूक्तं स्यात्" के साथ "यतः पक्ष शब्देन समुदायस्यावचनात् धर्मिण एव वचनात् तदंशवत् तद्धर्मो न तदेकदेशः"[६५] वाक्य आया है । **प्रमाणवार्तिक स्ववृत्ति** में "तदा हि वक्तुरभिप्रायवशात्र तदेकदेशतः तदंश पक्षशब्देन समुदायावचनात्"[६६] इस प्रकार कथन पाया जाता है । **सिद्धिविनिश्चय** का कथन इसी पर आधारित प्रतीत होता है ।

कारिका संख्या ६/२ की वृत्ति में "व्याप्तिर्व्यापकस्य तत्र भाव एव व्याप्यस्य वा तत्रैव भावः"[६७] वाक्य पाया जाता है । यह हेतुबिन्दु का वचन है । कहा गया है[६८] -

तस्य व्याप्तिर्हि व्यापकस्य तत्र भाव एव ।
व्याप्यस्य वा तत्रैव भावः ।

कारिका संख्या ६/९ की वृत्ति में "अतीतैककालानां गतिर्नानागतानां व्यभिचारात् इति कोऽयं प्रतिपत्तिक्रमः तथैव व्यवहाराभावात्"[६९] वाक्य आया है । कारिका संख्या ६/१६ की वृत्ति में भी "तादात्म्येन कुतश्चित्" करके यही "अतीतैककालानां गतिर्नानागतानां व्यभिचारात्"[७०] वाक्य उद्धृत है ।

यह **प्रमाणवार्तिक स्ववृत्ति**[७१] का वचन है । वहाँ पर पूर्ण कारिकांश इस प्रकार है - अतीतैककालानां गतिर्नानागतानां व्यभिचारात्" लगभग इसी का कथन वाली एक अन्य कारिका है[७२] -

"शक्तिप्रवृत्या न विना रसः सैवान्यकारणम् ।
इत्यतीतैककालानां गतिस्तत्कार्यलिंगजा ॥"

यह कारिका **सिद्धिविनिश्चय** टीका भाग २ पृष्ठ ६८६ पर उल्लेखित है । इसका निर्देशस्थल ज्ञात नहीं है ।

कारिका संख्या ६/३१ की वृत्ति का प्रारम्भ "मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम्"[७३] इति मत्यादीनां तादात्म्यलक्षणं सम्बन्धमाह सूत्रकारः' से हुआ है । यह **तत्त्वार्थसूत्र** का सूत्र है[७४] ।

कारिका संख्या ६/३७ की वृत्ति में "तथा च" करके निम्नलिखित दो कारिकाएँ दी गयी हैं[७५] -

"दध्यादौ न प्रवर्त्तेत बौद्धः तद्भुक्तये जनः ।
अदृश्यां सौगतीं तत्र तनूं संशंकमानकः ॥
दध्यादिके तथा भुक्ते न भुक्तं कांजिकादिकम् ।
इत्यसौ वेत्तु नो वेत्ति न भुक्ता सौगती तनुः ॥ इति"

सिद्धिविनिश्चय के टीकाकार अनन्तवीर्य ने भी "तथा च" करके उक्त दोनों कारिकाओं को यथावत् उद्धृत किया है[७६] । "दध्यादौ" आदि उक्त दोनों कारिकाएँ कहाँ की है, यह स्पष्ट नहीं है । संभव है, इनकी रचना स्वयं अकलंकदेव ने की हो, परन्तु किसी सबल प्रमाण के बिना कुछ भी निश्चय करना कठिन है।

कारिका संख्या ७/६ की वृत्ति में "यतः" करके "पूर्वस्य वैकल्यमपरस्य कैवल्यम्"[७७] यह वाक्य आया है । यह बौद्ध दार्शनिक का कथन है । यह वाक्य **हेतुबिन्दु** से लिया गया है[७८] ।

कारिका संख्या ७/११ की वृत्ति में "तत्र" करके "यथादर्शनमेवेयं माननेय (मेय) फलस्थितिः"[७९] वाक्य उद्धृत है । यह संभवतः **प्रमाणवार्तिक** की एक कारिका का ही पूर्वार्ध है । दोनों में अन्तर यही है कि "यथानुदर्शनमेवेयं के स्थान पर प्रमाणवार्तिक में "यथानुदर्शनञ्चेयं" पाठ मिलता है । **प्रमाणवार्तिक** की पूर्णकारिका इस प्रकार है[८०]—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"यथानुदर्शनज्ञेयं मानमेयफलस्थितिः ।
क्रियतेऽविद्यमानापि ग्राह्यग्राहकसंविदाम् ॥"

कारिका ८/२१ की **वृत्ति** में "युगपज्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसो लिंगं न भवेत्"[८१] करके वाक्य पूर्ण हुआ है। यह **न्यायसूत्र** का सूत्र है, जो इस प्रकार पाया जाता है[८२] -

युगपज्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसो लिङ्गम् ।

कारिका संख्या ८/३९ की **वृत्ति** में "चैतन्यवृत्तिमचेतनस्य" करके "स्वार्थमिन्द्रियाणि आलोचयन्ति मनः सङ्कल्पयति अहङ्कारोऽभिमन्यते बुद्धिरध्यवस्यति इति"[८३] वाक्य उद्धृत है । इसी **वृत्ति** के टीकाकार अनन्तवीर्य ने "तथा च तेषां सिद्धान्ते" करके "इन्द्रियाण्यर्थमालोचयन्ति, अहङ्कारोऽभिमन्यते, मनः संकल्पयति, बुद्धिरध्यवस्यति, पुरुषश्चेतयते[८४]" वाक्य उद्धृत किया है ।

निःसन्देह ये सांख्यमत के कथन हैं । परन्तु कहाँ से ग्रहण किये गये हैं, यह पता नहीं चलता । हाँ, **सांख्यकारिका** की **माठरवृत्ति**[८५] में उक्त कथनों का भाव शब्दान्तरों के साथ प्राप्त होता है । यथा- "एवं बुद्ध्यहङ्कारमनश्चक्षुषां क्रमशो वृत्तिर्द्रष्टा-चक्षुरूपं पश्यति मनः संकल्पयति अहङ्कारोऽभिमानयति बुद्धिरध्यवस्यति ।" इसी तरह **सिद्धिविनिश्चय** १/२३ की **टीका** पर भी टीकाकार ने यही वाक्य उद्धृत किया है[८६] ।

कारिका ९/१४ की वृत्ति में "यद्ययं निर्बन्धः"[८७] करके "नाकारणं विषयः"[८८] वाक्य उद्धृत है[८९]। यह **जैनेन्द्रव्याकरण** का सूत्र है[९०] ।

कारिका संख्या १०/७ की वृत्ति में "पर्याय (निराकरणात् दुर्णयः) यथा रूप" से "आरामं तस्य पश्यन्ति"[९१] इत्यादि **बृहदारण्यकोपनिषद्**[९२] का वाक्य पुनः उद्धृत हुआ है ।

कारिका ११/२५ की वृत्ति में "यतः" करके "सर्वे" इत्यादि भवेत्[९३] के द्वारा बौद्धमत की ओर संकेत किया गया है । यह संकेत **प्रमाणवार्तिक** की तरफ है । **प्रमाणवार्तिक** में सम्पूर्ण कारिका इस प्रकार पायी जाती है[९४]-

"सर्वे भावाः स्वभावेन स्वस्वभावव्यवस्थितेः ।
स्वभावपरभावाभ्यां यस्मात् व्यावृत्तिभागिनः ॥"

कारिका १२/११ की **वृत्ति** में "एतदुक्तं च" करके

"अभिन्नः संविदात्मार्थः भाति भेदीव सः पुनः ।
प्रतिभासादिभेदे स्वापप्रबोधादौ न भिद्यते ॥"[९५]

यह कारिका उद्धृत की गयी है । इस कारिका का निर्देश स्थल ज्ञात नहीं हो सका है ।

सविवृति प्रमाणसंग्रह -

प्रमाणसंग्रह अकलंकदेव की तार्किक / युक्ति प्रधान रचना है । दूसरे शब्दों में इसमें प्रमाणों / युक्तियों का संग्रह किया गया है, इसलिए इसको **प्रमाणसंग्रह** नाम दिया गया है । इस ग्रन्थ की भाषा और विषय दोनों ही अत्यन्त जटिल और दुरूह हैं, इसलिए विद्वानों को भी कठिनता से समझने योग्य है । इसमें अकलंक के अन्य ग्रन्थों की अपेक्षा प्रमेयों की बहुलता है । **प्रमाणसंग्रह** के अनेक प्रस्तावों के अन्त में **न्यायविनिश्चय** की बहुत सी कारिकाएँ बिना किसी उपक्रम वाक्य के ली गयी हैं और इसकी प्रौढ शैली के कारण, इसे अकलंकदेव की अन्तिम कृति और **न्यायविनिश्चय** के बाद की रचना माना गया है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रमाणसंग्रह में ९ प्रस्ताव हैं और कुल ८७$\frac{1}{2}$ कारिकाएँ हैं । स्वयं अकलंकदेव ने इन कारिकाओं पर एक पूरक वृत्ति भी लिखी है । इस वृत्ति को विवृति कहा गया है ।

प्रमाणसंग्रह की **स्वोपज्ञ विवृति** में मात्र तीन उद्धरण मिलते हैं । कारिका १९ की विवृति में "अयुक्तम्" करके "नाऽप्रत्यक्षमनुमानव्यतिरिक्तं मानम्"[१६] यह वाक्य उद्धृत किया है । यही वाक्य अकलंक ने अपने एक अन्य ग्रन्थ **लघीयस्त्रय** की कारिका १२ की **विवृति** में "तन्नाप्रत्यक्षमनुमानव्यतिरिक्तं प्रमाणम्" इत्ययुक्तम्[१७]" करके उद्धृत किया है । यहाँ पर "मानम्" के स्थान पर "प्रमाणम्" पाठ मिलता है ।

यह किसी बौद्धाचार्य का कथन है । इसका मूल निर्देशस्थल प्राप्त नहीं हो सका है ।

कारिका संख्या ५७ की **विवृति** में "तथा परप्रसिद्धप्रमाणेन" करके "नाप्रत्यक्षं प्रमाणं न परलोकादिकं प्रमेयम् अननुमानमनागमं च"[१८] वाक्य उद्धृत किया गया है । यह भी किसी बौद्ध दार्शनिक का कथन है। इसका निर्देशस्थल अभी ज्ञात नहीं हो सका है ।

कारिका ६४ की **विवृति** में अकलंक ने निम्न वाक्य उद्धृत किया है[१९]-"क्षीणावरणः समधिगतलक्षणोऽपि सन् विचित्राभिसन्धिः अन्यथा देशयेत्" । इसका निर्देशस्थल भी अभी प्राप्त नहीं हो सका है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अकलंककृत **न्यायविनिश्चय, सवृत्तिसिद्धिविनिश्चय** एवं **सविवृति प्रमाणसंग्रह** में **तत्त्वार्थसूत्र, त्रिलक्षणकदर्शन, वादन्याय, आप्तमीमांसा बृहदारण्यकोपनिषद्, प्रमाणवार्तिक, सन्तानान्तरसिद्धि, हेतुबिन्दु, प्रमाणविनिश्चय, आचार्य दिग्नाग, न्यायावतार, प्रमाणवार्तिक स्ववृत्ति, न्यायसूत्र, सांख्यकारिका माठरवृत्ति, प्रमाणवार्तिक मनोरथनन्दिनीटीका** तथा **जैनेन्द्र व्याकरण** आदि से वाक्य, वाक्यांश या कारिकाएँ उद्धृत की गयी हैं या सम्मिलित की गयी हैं ।

अकलंकदेव एक प्रौढ विद्वान् होने के साथ-साथ, प्रखर दार्शनिक हैं, इसलिए उनके ग्रन्थ मूलतः दार्शनिक, तर्क-बहुल एवं विचारप्रधान हैं । अतः यह स्वाभाविक है कि उनके ग्रन्थों में दार्शनिक / तार्किक ग्रन्थों के ही उद्धरण प्राप्त हों । इन उद्धरणों में अन्य परम्पराओं के साथ-साथ विशेष रूप से बौद्ध साहित्य के ही अधिक उद्धरण पाये जाते हैं । बौद्ध दार्शनिकों में भी इन्होंनें धर्मकीर्ति के विचारों और उनकी युक्तियों को अधिक निशाना बनाया है । इसका कारण यही हो सकता है कि अकलंक के समय में बौद्धों का अधिक जोर था, उस पर भी धर्मकीर्ति ने और उनके विचारों ने अधिक धूम मचा रखी थी ।

विवेच्य ग्रन्थों में कुछ ऐसे उद्धरण मिले हैं, जो स्पष्टतः ग्रन्थान्तरों से लिये गये दिखते हैं । उनमें कुछ ऐसे भी हैं जो कारिका या विवृति के ही अंग बन गये हैं, इनमें कोई उपक्रम वाक्य या संकेत नहीं होने से मूलकार द्वारा रचित प्रतीत होते हैं ।

उपर्युक्त ग्रन्थों में दूसरे-दूसरे ग्रन्थों के जो पद्य या वाक्य आदि उद्धृत हैं, उनके मूल निर्देश स्थलों को खोजने की कोशिश की गई है । बहुत से उद्धरणों का निर्देशस्थल अभी मिल नहीं सका है, उन्हें खोजने का प्रयास जारी है । यह भी प्रयत्न है कि इस तरह के तथा अन्य उद्धृत पद्य या वाक्य आदि जिन-जिन ग्रन्थों में आये हैं, उनको भी एकत्रित कर लिया जाये, जिससे उनका तुलनात्मक अध्ययन किया जा सके ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टिप्पणी :

१. **स्याद्वाद रत्नाकर**, पृ० २३.
२. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, पृ० १४१.
३. **अकलंकग्रन्थत्रय**, प्रस्तावना, पृ० ३८-३९.
४. **न्यायविनिश्चयविवरण**, प्रथम भाग, पृ० २२९.
५. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, पृ० १४१.
६. **न्यायविनिश्चयविवरण**, पृ० ३०१, ३९०.
७. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, भाग-१, प्रस्तावना, पृ० ५८-५९.
८. **न्यायविनिश्चय**, कारिका १/११०.
९. **तत्त्वार्थसूत्र**, ५/३८.
१०. **न्यायविनिश्चय**, कारिका १/११४.
११. **तत्त्वार्थसूत्र** ५/३०.
१२. **न्यायविनिश्चय**, कारिका २/१५४.
१३. **न्यायविनिश्चयविवरण** भाग २, पृ० १७७ परउद्धृत ।
१४. **न्यायविनिश्चय**, कारिका २/२०९.
१५. **वादन्याय**, श्लोक १
१६. **न्यायविनिश्चय**, कारिका ३/२१.
१७. **आप्तमीमांसा**, कारिका - ५.
१८. **सिद्धिविनिश्चय**, कारिका १/२० वृत्ति ।
१९. **बृहदारण्यकोपनिषद्**, ४/३/१४.
२०. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका १/२२ वृत्ति ।
२१. **प्रमाणवार्तिक**, कारिका २/२०९.
२२. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका २१/२७ वृत्ति ।
२३. **तत्त्वार्थसूत्र** १/१३.
२४. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका २/८ वृत्ति ।
२५. वही, कारिका २/१५ वृत्ति ।
२६. वही, कारिका २/१२ वृत्ति ।
२७. वही, कारिका ७/११ वृत्ति ।
२८. **प्रमाणवार्तिक**, कारिका २/३५७.
२९. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका २/२५.
३०. **तत्त्वार्थवार्तिक** १/४ पृ० २६.
३१. पं० महेन्द्रकुमार जैन, **सिद्धिविनिश्चयटीका**, भाग-१, प्रस्तावना, पृ० २७.
३२. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ३/५ वृत्ति ।
३३. वही, कारिका ३/८ वृत्ति ।
३४. **हेतुबिन्दु**, पृ० ५५ एवं **वादन्याय**, पृ० ६.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ३/१८ वृत्ति ।
३६. **हेतुबिन्दु**, पृ० १४३.
३७. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ४/१४ वृत्ति ।
३८. **न्यायकुमुदचन्द** २/७, पृ० ३४२.
३९. वही, २/७, पृ० ३४२.
४०. वही, २/७ टिप्पण १-२, पृ० ३४२.
४१. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ४/२१ वृत्ति ।
४२. वही, कारिका २/२१, टिप्पण ४, पृ० ३०३.
४३. वही, कारिका ५/३ वृत्ति ।
४४. **प्रमाणवार्तिक**, कारिका ४/१७.
४५. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ५/३ वृत्ति ।
४६. वही, कारिका ५/३ वृत्ति ।
४७. वही, कारिका ५/४ वृत्ति ।
४८. **प्रमाणवार्तिकस्ववृत्ति** १/३.
४९. वही, स्ववृत्ति, टीका पृ० २४.
५०. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ५/५ वृत्ति ।
५१. **हेतुबिन्दु**, कारिका १
५२. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ६/१२.
५३. वही, कारिका ५/८ वृत्ति ।
५४. वही, कारिका ५/१०.
५५. **वादन्याय**, श्लोक १
५६. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ५/११ वृत्ति ।
५७. वही, कारिका ५/१५.
५८. **प्रमाणसंग्रह**, कारिका ५.
५९. **न्यायावतार**, श्लोक २०.
६०. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ५/१२$\frac{१}{२}$-वृत्ति ।
६१. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ६/२ वृत्ति ।
६२. **हेतुबिन्दु**, पृ० ५३.
६३. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ६/२ वृत्ति ।
६४. **हेतुबिन्दु**, पृ० ५२.
६५. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ६/२ वृत्ति ।
६६. **प्रमाणवार्तिकस्ववृत्ति**, पृ० १६.
६७. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ६/२ वृत्ति ।
६८. **हेतुबिन्दु**, पृ० ५३.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६९. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ६/९ वृत्ति ।
७०. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ६/१६ वृत्ति ।
७१. **प्रमाणवार्तिक स्ववृत्ति** १/१२ पृ० ४९.
७२. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, भाग-२, पृ० ६८६, टिप्पण ९.
७३. वही, कारिका ६/३१ वृत्ति ।
७४. **तत्त्वार्थसूत्र** १/१५.
७५. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ६/३७ वृत्ति ।
७६. वही, पृ० ४३८.
७७. वही, कारिका ७/६ वृत्ति ।
७८. **हेतुबिन्दु**, पृ० ६६.
७९. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ७/११ वृत्ति ।
८०. **प्रमाणवार्तिक**, कारिका २/३५७.
८१. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ८/२१.
८२. **न्यायसूत्र** १/१/१६.
८३. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ८/३९ वृत्ति ।
८४. वही, टीका, पृ० ५८१.
८५. **सांख्यकारिका** ३०, माठरवृत्ति ।
८६. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका १/२३, पृ० ९९.
८७. वही, कारिका ९/१४ वृत्ति ।
८८. **प्रमाणवार्तिक मनोरथ नन्दिनी टीका** २/२५७.
८९. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ९/३७ वृत्ति ।
९०. **जैनेन्द्र व्याकरण** १/१/१००.
९१. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका १०/७ वृत्ति ।
९२. **बृहदारण्यकोपनिषद्** ४/३/१४.
९३. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका ११/२५.
९४. **प्रमाणवार्तिक** ३/३९.
९५. **सिद्धिविनिश्चयटीका**, कारिका १२/११.
९६. **प्रमाणसंग्रह**, कारिका १९ विवृति ।
९७. **लघीयस्त्रय**, कारिका १२ विवृति ।
९८. **प्रमाणसंग्रह**, कारिका ५७ विवृति ।
९९. वही, कारिका ६४ विवृति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

न्यायविनिश्चय (अकलंकग्रन्थत्रयान्तर्गत) सिंघी जैन ग्रन्थमाला, ग्रन्थांक १२, १९३९.

न्यायावतार (न्यायावतार वार्तिकवृत्यन्तर्गत) सिंघी जैन सीरीझ, भारतीय विद्या भवन, बम्बई ।

स्याद्वादरत्नाकर, आर्हत्प्रभाकर कार्यालय, पूना ।

सिद्धिविनिश्चयटीका भाग-१, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन १९५९.

सिद्धिविनिश्चयटीका भाग-२, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १९५९.

हेतुबिन्दु, ओरियण्टल सीरीज, बडौदा ।

बृहदारण्यकोपनिषद्, निर्णय सागर, बम्बई ।

प्रमाणवार्तिक, बिहार उडीसा रिसर्च सोसायटी, पटना ।

प्रमाणवार्तिक मनोरथनन्दिनी टीका ।

प्रमाणवार्तिक स्ववृत्ति, किताब महल, अलाहाबाद ।

प्रमाणवार्तिक स्ववृत्ति, हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी ।

प्रमाणवार्तिकालंकार, का॰ जायसवाल इंस्टिट्यूट, पटना ।

तत्त्वार्थवार्तिक भाग-१, भारतीय ज्ञानपीठ, १९८९.

तत्त्वार्थवार्तिक भाग-२, भारतीय ज्ञानपीठ, १९९३.

वादन्याय, महाबोधि सोसाइटी, सारनाथ ।

आप्तमीमांसा, निर्णयसागर, बम्बई ।

सवृत्ति सिद्धिविनिश्चय (सिद्धिविनिश्चय टीकान्तर्गत) ।

न्यायकुमुदचन्द्र भाग-१, सत्गुरु पब्लिकेशन्स, दिल्ली १९९१.

न्यायकुमुदचन्द्र, भाग-२, सत्गुरु पब्लिकेशन्स, दिल्ली १९९१.

न्यायविनिश्चयविवरण भाग-१-२. भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन १९५४.

ब्रह्मसूत्रशाङ्करभाष्य, निर्णयसागर, बम्बई ।

न्यायमंजरी, चौखम्बा सीरीज, काशी ।

प्रकरणपंजिका, चौखम्बा सीरीज, काशी ।

तत्त्वार्थश्लोकवार्तिक, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई ।

आप्तपरीक्षा, वीर सेवा मन्दिर, दरियागंज, दिल्ली ।

प्रमेयकमलमार्तण्ड, निर्णयसागर, बम्बई ।

प्रमाणविनिश्चय, अनुपलब्ध ।

प्रमाणवार्तिक स्ववृत्ति टीका, किताबमहल, अलाहाबाद ।

सविवृति प्रमाणसंग्रह (अकलंकग्रन्थत्रयान्तर्गत), सिंघी जैनग्रन्थमाला, बम्बई १९३९.

न्यायसूत्र, चौखम्बा-सीरीज, काशी ।

सांख्यकारिका माठरवृत्ति, चौखम्बा सीरीज, काशी ।

जैनेन्द्र व्याकरण, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी ।

लेखक ने आधे से ज्यादा किताबों के प्रकाशन-वर्ष के बारे में कोई सूचना नहीं दी । हम लाइलाज हैं । -संपादक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org